7th National Conference on Multidisciplinary Research in the Field of Development

Venue : Conference Hall, Vikramaditya College, Vijay Nagar, Jabalpur (M.P.)
Date : 13 / 07 / 2019, Saturday

ISSN : 2581-8872

Vol - 1, No. - 6 July - 2019

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research

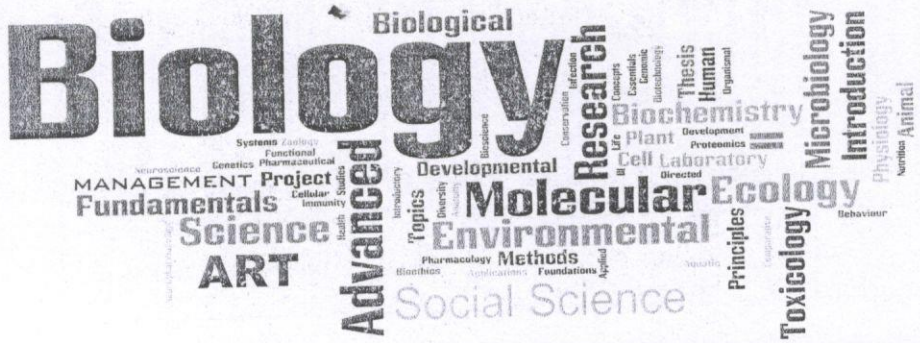

Peer Reviewed - Refereed Journal
Impact Factor - 3.2, Open Access,
Double Blind, Monthly Online Journal

Google scholar | ISRS International Scientific Research Solution | Indian Tech | GLOBAL CERTIFICATION SERVICES

EDITOR
PRASHANT KUMAR

PUBLISHED BY
International Scientific Research Solution
Web : www.isrs.in
Email : ncrd2016@gmail.com

CONTENTS

S. No.	Paper Title	Author Name	Page No.
1	In Rural Economy Importance of Agriculture Development	Dr. Devendra Vishwakarma	1-6
2	Role of Agriculture in Rural Development	Dr. Amit Sahu Dr. Devendra Vishwakarma	7-11
3	Women Entrepreneur in India	Dr. Vandana Namdeo Bankar	12-15
4	Status of Scheduled Tribes Population in India	Dr. Ericharla Raju	16-24
5	MGNREGA : Employment Generation Policy for Rural Development	Dr. Rajani Sontakke	25-31
6	Corporate Social Responsibility – Not a Concept of Corporate Philanthropy	Hemant Sindhwani	32-37
7	The Effect of Thermal Free Carriers on the J/V Characteristic of a Trap-Free Insulator Working Under Non Constant Mobility Regime	Reshma Mehra Yougal Kishor Sharma	38-40
8	Identifying the Role of Education in Socio-Economic Development	Sonia Dovari	41-50
9	Quinoa - unique ingredient for Indian cuisine	Chef Devashish Pandey	51-53
10	Study on Anthropometric Assessment of Pre-School Children of Slum Area (Sarvodaya Nagar) of Jabalpur City	Anushka Nagaich	54-58
11	Population Growth and Environmental Effects	Sri.T.Tirupati Naidu	59-61
12	Microfinance in India and Rural Development	Dr. Basanti Mathew Merlin	62-64
13	Accountability of English Communication Skill in Developing Personality	Dr. Manisha Dwivedi	65-68
14	Achieving Human Development through Psychological Intervention	Mohammad Abdullah Sarkar	69-73
15	Changing Dynamics of Human Resource Management: A New Strategy for Development of Indian Banking Sector	Sachin Kumar	74-79
16	Organizational Culture and Performance : A Research Review on Service Sector	Amit Kumar	80-84
17	Modern Marketing Strategies for Special Interest Tourism	Dr. Sanjeev Kumar Saxena	85-88
18	A Comparative Analysis of Employee Productivity between Regular Employees and Outsourced Employees in Indian Railways with special reference to Rail Coach Factory, Nishatpura, Bhopal	Ritu Garg	89-96
19	गाँधीवादी आर्थिक विचारधारा की प्रासंगिकता	डॉ. (श्रीमती) मंजुलता कश्यप रामसेवक राम भगत	97-101
20	हिन्दी दलित आत्मकथाएँ और उनका देशज शब्द संसार	धर्मेंद्र कुमार कोरी	102-106
21	निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 के प्रावधानों के संदर्भ में शिक्षकों का दृष्टिकोण	राजेश तिवारी डॉ. श्रीमती अर्चना दुबे	107-111
22	शान्ति शिक्षा के पोषण में जनसंचार माध्यम	मनोज कुमार सिंह	112-115
23	प्राचीन भारत में शिक्षा का विकास	योगेश कुमार सिंह	116-120
24	मध्यप्रदेश के जबलपुर जिले के पर्यटन विकास की सम्भावनायें (विशेष भेड़ाघाट के संदर्भ में)	मदन सिंह मरावी डॉ. संजय कान्त खरे	121-125

प्राचीन भारत में शिक्षा का विकास

योगेश कुमार सिंह
(अतिथि व्याख्याता), शिक्षाशास्त्र विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर वि.वि. सागर (म.प्र.)

सारांश :– शिक्षा एक प्रक्रिया है, जिसमें तथा जिसके द्वारा बालक के ज्ञान, चरित्र तथा व्यवहार को एक विशेष सांचे में ढाला जाता है।"[1] किसी भी व्यक्ति या समाज का परिचय उसके नाम से ही प्रारम्भ होता है, भारतीय का भी एक नाम है भारत या भारतवर्ष। एशिया के अन्तर्गत भारत एक विस्तीर्ण प्रायद्वीप है, जिकस आकार एक विषमबाहु चतुर्भुज के समान प्रतीत होता है। इसी तरह भारतीय शिक्षा और व्यक्ति आवश्यकता के अनुसार विकास करता रहा जो आज भी शिक्षा में कहीं न कहीं एक आधार के रूप में मिलता है।

प्राचीन भारत में शिक्षा के विकास में मानव सभ्यता, संस्कृति और उत्कर्ष ही रहा है। मानव अपनी निरन्तर जिज्ञाशा के लिए नित नये ज्ञान की खोज में लगा रहा। भारत मे शिक्षा का विकास उसी का परिणाम रहा। जहॉ कभी कुछ के लिए था आज सभी के शिक्षा की बात की जा रही है।

मुख्य बिन्दु :– वैदिक शिक्षा, जैन शिक्षा और बौद्ध शिक्षा।

पृष्ठभूमि :– मानव सभ्यता व संस्कृति का विकास तथा मानव उत्कर्ष का अभ्युदय निःसंदेह मानव के बुद्धि चातुर्थ, विवेक तथा सद्गुणों की परिणिति स्वीकार किया जा सकता हैं अपने अनुभव गुणों के कारण मानव ने स्वयं का सर्वांगीण विकास करते हुए प्राकृतिक संसाधनों तथा प्राणि व वनस्पति जगत की सहायता से स्वयं के जीवन को सुखप्रद बनाया है। वस्तुतः शिक्षा के द्वारा ही मानव–सभ्यता व संस्कृति का उत्थान संभव हो सका है। शिक्षा ने ही मानव को परिपूर्ण बनाया। परन्तु सभ्यता व संस्कृति की विकास यात्रा में शिक्षा की अवधारणा, प्राकृति व व्यवस्था में अनेकों बार परिवर्तन आये हैं। तत्कालीन सामाजिक व धार्मिक परिस्थितियाँ एवं राजनैतिक व आर्थिक शासन व्यवस्था आदि तत्समय प्रबलित शिक्षा व्यवस्था को सार्थक रूप से प्रभावित करती रही है। अतः समकालीन भारतीय शिक्षा प्रणाली को सही ढंग से समझने के लिए उसकी पृष्ठ भूमि में संज्ञान में लेना जरूरी है। प्राचीन भारत में प्रदान की जाने वाली शिक्षा को वैदिक कालीन शिक्षा, जैन शिक्षा और बौद्ध कालीन शिक्षा तथा मुस्लिम कालीन शिक्षा में बांटा जा सकता है।

आगे संक्रमण कालीन शिक्षा की व्यवस्था को देखना और उसका विकास जिसमें विभिन्न वैश्विक देशों ने भारत में अपना अधिपत्य स्थापित करने का प्रयास किया। उनका यह मानना भी था कि अपने शासक और शासन के साथ व्यवस्था और नियमों को जन–जन तक पहुँचाने में शिक्षा बड़ा ही महत्वपूर्ण व्यवस्था है संक्रमण काल के दौरान ही विश्व में अनेक प्रकार के प्रयोग हुए और विज्ञान को बढ़ावा मिला जिससे अनेक खोज के साथ मनोविज्ञान का विकास होता दिखा इसमें यूरोप और अमेरिका का योगदान रहा है। यूरोपीय देश–पुर्तगाली, ब्रिटिश, फ्रांसिसी, हॉलैण्ड के लोगों ने भारत में अपनी प्रभुता को स्थापित करने के लिए शिक्षा के माध्यम से जानने का प्रयास किया और साथ में अपने को लाभ पहुँचाने का कार्य किया।

इसी क्रम में आधुनिक भारत के विकास में लोगों में शिक्षा के द्वारा ही उनमें राष्ट्रीय एकता और पराधीनता की स्पष्टता को जानने का साहस और मानवीयता के प्रति आकर्षण उत्पन्न हुआ। तीसरा चरण हम कह सकते है कि देश की स्वंतत्रता के साथ ही स्वयं के लिए अपनों के लिए नियम – संहिताओं का निर्माण और जन–जन तक शिक्षा को पहुँचाने के लिए प्रयास किया गया। जिसमे उन लोगों की भी बात की गयी जो सदियों से शिक्षा से वंचित थे, समाज में वंचित थे साथ में गुलामी का शिकार सबसे ज्यादा थे। गुलामी का शिकार वे सिर्फ परायों से ही नहीं बल्कि अपनों से भी होते थे। इन सबकों एक व्यवस्था के द्वारा शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की गयी राष्ट्रीय संहिता में कानून बनाकर उनकों यह अधिकार प्रदान करने का प्रयास किया जाता रहा हैं समय–समय पर नये–नये प्रावधानों के माध्यम से उनकों मुख्य धारा में लाने का प्रयास किया जा रहा है। इसी चरण में आज हमारा देश 21वीं सदी में नई शिक्षा नीति 2019 तक का सफर तय करने जा रहा है, जो एक विश्वसनीय और सराहनीय उपाय है।

अब हम भारत में शिक्षा इन तीन चरणों पर बात रखेगें :

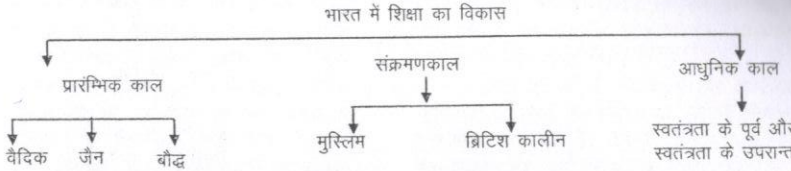

हम यहाँ भारत की प्राचीन शिक्षा के विकास की बात कर रहे हैं जिसमें हम प्रारम्भिक काल के शिक्षा की व्यवस्था और विकास को जानेगें।

प्रारम्भिक विकास :– भारतीय भूभाग का राजनैतिक इतिहास बताता है कि भारतीय समाज में राजनैतिक एकता शायद ही कभी भी नहीं रही है। यहाँ सदैव ही अने छोटी–छोटी रियाशतें या राज्य रहें हैं जो प्रभुत्व के लिए आपस में लड़ते – झगड़ते रहे है। इसी तरह यहाँ शिक्षा का प्रारम्भिक विकास भी हुआ जिसमें किसी विशेष वर्गों से प्रारम्भ हुआ और सुविधा के अनुसार व्यवस्था कि गयी थी।[2] शिक्षा का प्रारम्भ प्राचीन काल से चला आ रहा है। ये क्रम आदिमानव से ही कुछ न कुछ जानने की चेतना ही शिक्षा और आन की ओर बढ़ने प्रेरणा प्रदान करती है। इस विकास में दो काल महत्वपूर्ण हैं – (1) वैदिक काल, जैन काल और बौद्ध काल।

वैदिक काल :– प्राचीन भारती शिक्षा का उदभव वेदों से माना जाता है। यद्यपि यह बात स्पष्ट रूप से निश्चित नहीं हो पाई है कि वेद कितने पुराने हैं तथापि यह तथ्य सुनिश्चित है कि यह हिन्दुओं का सर्वाधिक पुराना साहित्य है।

वैदिक ऋचाओं को लम्बे समय के अन्तराल में अनेक ऋषियों के द्वारा रचना गया था, परन्तु आदि काल मे वेदों का ज्ञान लिपिबद्ध नहीं था। बहुत समय बाद ऋषियों के द्वारा वेदों को लिपिबद्ध किया गया।

वेद शब्द की उत्पत्ति विद् धातु से हुई है। जिसका अर्थ–ज्ञान प्राप्त करना है। अतः वेद शब्द का शाब्दिक अभिप्राय है। जिससे ज्ञान प्राप्त किया जाता है। वेद शब्द का व्युत्पत्यात्मक अर्थ "समस्त ज्ञान का स्रोत तथा असीमित कोश"[3] होता है जो दर्शाता है कि वेदों में सांसारिक, व्यावहारिक तथा अध्यात्मिक क्षेत्रों में मानव के लिए आवश्यक समस्त ज्ञान संग्रहीत है, ऐसा ज्ञान मानवता की सर्वतोन्मुखी प्रगति करने तथा सभी दिशाओं में सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक हें वेदों को भारतीय जीवन दर्शन का स्रोत माना जाता हैं वेदों को अनादि माना जाता है। भारतीय शिक्षा का आदि स्रोत निःसंदेह वेद ही था। तथा इन्हीं के अनुरूप भारतीयों कासम्पूर्ण जीवन दर्शन निर्धारित हुआ। वेद कालीन युग में वेदों का ज्ञान भारतवासियों के दैनिक जीवन का अंग बन गया था तथा यह ज्ञान आज भी भारतीयों के जीवन दर्शन के विभिन्न रीतियों प्रथाओं तथा परम्पराओं के रूप में विद्यमान है वेद के चार भाग क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद हैं जो अब चार वेदों के रूप में स्वीकार किये जाते है। वैदिक काल में भारतवर्ष में गुरूकुल आधारित शिक्षा प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ था।

उपनिषद में शिक्षा के लिए कहा गया है:

शचीभिर्नः शचीवस् दिवा नक्तं दशस्यतम।
मा वां रातिरूप दसत्कदा चना स्मद्राति कदाचन।।[3]

वैदिक शिक्षा की विशेषताएँ :

शिक्षा का उद्देश्य :– वैदिक काल में जीवन दो प्रकारों (परा तथा अपरा) में विभक्त था। परा का अर्थ था कि ज्ञान, कर्म तथा उपासना के द्वारा ब्रह्म अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति करना, जबकि अपना का अर्थ था संगठित तथा नियोजित सामाजिक व्यवस्था का संचालन करना। स्पष्ट है कि परा के लिए इस लोक से परे अर्थात् ईश्वरीय विधाओं का ज्ञान आवश्यक था तथा अपरा के लिए इस लोक से सम्बन्धित अर्थात् सामाजिक विधाओं का ज्ञान महत्वपूर्ण था। परा और अपरा में परा को सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। संभवतः वैदिक शिक्षा का उद्देश्य छात्रों का शारीरिक, मानिसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों का विकास इस तरह से करना था जिससे मोक्ष प्राप्ति के सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति की जा सके। सादा जीवन तथा उच्च विचारों के महाकाव्य से निर्दिष्ट होने वाली शिखा में छात्रों के सर्वांगीर्ण विकास पर बल दिया जाता है। उस समय की शिक्षा–नैतिक चरित का निर्माण करना,

पवित्रता तथा धार्मिकता का विकास करना, व्यक्तित्व का विकास करना, सामाजिक कुशलता की उन्नति करना, सांस्कृति का संरक्षण तथा प्रसार करना, जीविकोपार्जन के लिए तैयार करना था। अतः मानव का सर्वांगीण विकास करना साथ ही उसे पूर्ण बना और आत्म ज्ञान तथा ब्रह्म ज्ञान का बोध कराकर छात्रों को तत्कालीन जीवन दर्शन के सर्वोत्कृष्ट लक्ष्य अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति के लिए तैयार किया जाता था।

उपनयन संस्कार :– बालक के विद्याध्यापन का औपचारिक प्रारम्भ एक संस्कार के द्वारा होता था। जिसे उपनयन संस्कार कहते है। उपनयन का अर्थ है पास ले जना अतः बालक को शिक्षा प्राप्त करने के लिए अध्यापक के पास ले जाना ही उपनयन संस्कार कहलाता है। उपनयन संस्कार के उपरान्त ही बालक ब्रह्मचार्य आश्रम में प्रवेश करता था तथा ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने के कारण ब्रह्मचारी कहलाता था। वह कोपीन, मृगछाला, दण्ड कमण्डल तथा मेखला का प्रयोग करता था। उपनयन में बालक का दूसरा जन्म भी कहा जाता था। विद्यारम्भ के संस्कार को दूसरा जन्म अथवा आध्यात्मिक जन्म भी कहा जाता था। इस काल में ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य वर्णों के बालकों के लिए उपनयन संस्कार आवश्यक था। तथा इसलिए तीनों वर्णों को द्विज कहते हैं। उपनयन के उपरान्त बालक गुरूकुल में रहकर गुरूकल की परम्पराओं का पालन करता था तथा अन्तःवासी या कुलवासी कहलाता था। यदि किसी छात्र के आचार विचार गुरूकुल के अनुरूप नही होते थे तो निष्काषित कर दिया जाता था।

जैसा की दुर्खीम ने कहा है, " शिक्षा युवा पीढ़ी का समाजीकरण है।"[4]

शिक्षा संस्थाएँ :– बालकों की प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही प्रारम्भ हो जाती थी। इसका उद्देश्य गुरूकुलों के लिए बालकों को तैयार करना। प्रथम अनौपचारिक शिक्षा का विकास घर पर ही होता था। छोटे–छोटे पारिवारिक विद्यालय होते रहते थे। पारिवारिक विद्यालय को आश्रम अथवा आचार्य कुल अथवा गुरूकुल भी कहा जाता था। गुरूकुल प्रायः शहर के कोलाहल से दूर उपवन या जंगल के एकान्त रमणीय स्थानों पर स्थित होते थे। जिसके संचालन में गुरू पत्नी की महत्वपूर्ण भूमिका रहती थी। गुरूकुल का जीवन अत्यन्त सरल तथा सहज होता था। उस काल में मिथिला, कॉशी, कॉंची, कैकेय, उज्जैन, प्रयाग, तंजौर, गालखण्ड आदि अनेक स्थान शिक्षा के लिए प्रसिद्ध थे। छात्रगण का प्रवेश केवल सदाचार तथा योग्यता के आधार पर होता था गुरूकुल की परम्पराओं तथा नियमों के प्रतिकूल आचरण करने पर छात्रों को गुरूकुल से निष्कासित कर दिया जाता था।

वेशभूषा वैदिक काल में गुरू कुलों में रहने वाले छात्रों के द्वारा पहने जाने वाली निश्चित थी। शरीर के ऊपरी भाग के वस्त्र के रूप में मृगछाला का उपयोग किया जाता था। ब्राह्मण छात्र काले नर हिरन की खाल, क्षत्रिय धब्बेदार हिरन की छाल तथा वैश्य छात्र बकरे की छाल का ऊपरी भाग को ढ़कने के लिए करते थे।

दिनचर्या भी जो कठिन ओर अनुशासन युक्त थी। प्रातः काल से लेकर शाम तक निर्धारित कार्यक्रम के तहत होता था। जो आचार्य की देख–रेख में करते थे।

वैदिक शिक्षा की कमियाँ :– कुछ भी जिसके कारण बौद्ध शिक्षा का विकास हुआ वे कमियाँ जैसे धर्म को अधिक महत्व दिया जाता था जिससे सामान्य जन तक पहुंच न होना, स्त्री शिक्षा की उपेक्षा रही, शूद्रों की शिक्षा की उपेक्षा रही, जन सामान्य की शिक्षा की उपेक्षा थी, लोक भाषाओं की उपेक्षा, विवाह स्वातंत्र्य का अभाव, सांसारिक जीवन की उपेक्षा शारीरिक श्रम के प्रति हेय दृष्टि और तो और नवीन धर्मों के प्रति हेय दृष्टि भी रखना वैदिक शिक्षा की कमियाँ रही। जिसके परिणामस्वरूप बौद्ध शिक्षा का विकास हुआ।

जैन शिक्षा :– प्राचीन भारतीय शिक्षा के विकास में से एक जैन शिक्षा का योगदान भी एक महत्वपूर्ण उल्लेखनीय है। जैन शिक्षा की वेदों में आस्था नहीं थी परन्तु दुःख का विनाश चाहता है और इसके लिए ज्ञान और आचरण की पूरी साधना पद्धति का निर्माण किया हैं जैन शिक्षा बौद्ध शिक्षा से पूर्व का है। जैन शब्द का निर्माण जिन शब्द से हुआ है। जिन शब्द का शाब्दिक अर्थ है : जीत लेना। "अतः सांसारिक मोहमाया, लालच, रागद्वेष तथा संग्रह की प्रवृत्ति आदि मानव शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लेना।"[5]

प्राचीन भारतीय शिक्षा–पद्धति का तल्लीनता से अध्ययन करने की दृष्टि से जैन शिक्षा पद्धति का अध्ययन बहुत ही महत्वपूर्ण है। भारत में श्रमण और ब्राह्मण (या वैदिक) शिक्षा पद्धतियों का समानान्तर विकास हुआ हैं श्रमण परम्परा के अन्तर्गत ही जैन और बाद में बौद्ध शिक्षा का विकास हुआ।

जैन शिक्षा वैदिक शिक्षा की तरह निःश्रेयस या मोक्ष मूलक रही है, किन्तु वैदिक शिक्षा के साथ अनेक समानताएँ होने पर भी जैन शिक्षा के स्वरूप में पर्याप्त अन्तर हैं वैदिक शिक्षा जिस प्रकार ऋषियों पर केन्द्रित थी, उसी प्रकार जैन शिक्षा के केन्द्र भी मुनि या श्रमण थे। किन्तु ऋषियों की तरह आश्रम व्यवस्था स्वीकार न करने के कारण जैन शिक्षा का स्वरूप वैदिक शिक्षा से भिन्न रूप में विकसित हुआ। आश्रम पद्धति को स्वीकार न करने के कारण जैन शिक्षा के प्रायः वैसे केन्द्र न बन सके; जैसे कि ऋषियों के आश्रम या तपोवन के रूप में वैदिक शिक्षा में विकसित हुए बाद में मंदिर तीर्थ, स्वाध्यायशाला आदि के रूप मे जैन परम्परा शिक्षा और संस्थानों का विकास हुआ।

जैन परम्परा में पाँच परमेष्ठी माने गए हैं। इन्हें ही वास्तविक गुरू माना गया है। अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु इन पाँच परमेष्ठियों के रूप में परिणमन किया गया हैं उपाध्याय का कार्य मुख्य रूप से शिक्षा का होता था। जैन शिक्षा में शिक्षण की सोलह विधियाँ बताई गई है– 1. निसर्ग विधि 2. आगमन विधि 3. निक्षेप विधि 4. प्रमाण विधि 5. नय विधि 6. क–स्वाध्याय विधि ख प्रश्नोत्तर विधि 7. पाठविधि 8. श्रवण विधि 9. पदविधि 10. पदार्थ विधि 11. प्ररूपणविधि 12. उपक्रम विधि 13. व्याख्या विधि 14. शास्त्रार्थ विधि 15. कथा, रूपक, तुलना उदाहरण विधि 16. संगोष्ठी विधि।[6]

जैन शिक्षा के उद्देश्य :– जैन दर्शन के अनुसार मनुष्य जीवन का अन्तिम उद्देश्य कैवल्य (मोक्ष, जीवन की अजीव से मुक्ति) हैं इसके लिए जैन दर्शन के रत्नलय (सम्यक दर्शन, सम्यक ज्ञान और समरूक चरित्र) को साधन मार्ग बताया है। तब शिक्षा का उद्देश्य यही होने चाहिए। इसके लिए वह नैतिक जीवन की प्राप्ति पर बल देता है। विभिन्न कलाओं में प्रशिक्षण का उद्देश्य पर बल जो जीवन के लिए जरूरी है। परमार्थ भाव के विकास के लिए व्यष्टि हित के साथ–साथ समष्टि हित का समर्थक है पाठ्यचर्य छात्र की परिपक्वता, क्षमता, आयु, क्रमागतता तथा उपयोगिता के सिद्धान्त पर आधारित होना चाहिए।

शिक्षक–शिक्षार्थी में सम्बन्ध में दोनों में सेवाभाव का पक्षधर है उसकी दृष्टि में दोनों को एक दूसरे के हित के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए। जैनाचार्य शिक्षार्थियों से यह अपेक्षा करते है कि शिक्षक क्रुद्ध होने पर वे सहन करें, उनके आदेशों का पालन करें उन्हें प्रसन्न करें। सम्यक ज्ञान, सम्यक दर्शन एवं सम्यक् आचार – प्रथम ऋषभदेव – महावीर स्वामी बीच में – आदिनाथ और अरिष्टनेति का नाम 24 तीर्थंकर जैन धर्म के दो सम्प्रदाय–दिगम्बर और श्वेताम्बर। वस्त्रत्यागने–वस्त्र पहनने वाले।

परन्तु जन शिक्षा, स्त्री शिक्षा और औद्योगिक शिक्षा हेतु विद्यालयों के संगठन के बारे में जैनाचार्य कुछ मौन नजर आते है। अनकी यह चुप्पी आलोचना का विषय है। इस संदर्भ में वह आज हमारा पथ–प्रदर्शन नहीं कर सकती। परन्तु जो कुछ अच्छा है, उसे हमें अवश्य लेना चाहिए।

बौद्ध कालीन शिक्षा :– यद्यपि वैदिक काल शिक्षा – व्यवस्था धीरे–धीरे धर्म का प्रभाव अत्यधिक हावी होने लगा था। शिक्षा में कर्मकाण्ड बढ़ने लगा था। वैदिक काल में ज्ञान प्राप्ति का मुख्य आधार तप एवं ध्यान था तथा शिक्षा का मुख्य आधार तप एवं ध्यान था तथा शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति को आध्यात्मिक विकास की ओर अग्रसर करना था, साथ ही कर्मकाण्डों के हावी होने लगा। ऐसी परिस्थिति में आज से लगभग 2500 वर्ष पूर्व गौतम बुद्ध (563–483) ने बौद्ध धर्म की स्थापना की थी।

बौद्ध धर्म को व्यापक हिन्दू धर्म का ही एक व्यापक विकसित रूप माना जाता है जो धार्मिक कर्मकाण्डों, पुरोहितवाद तथा रूढ़िवादिताओं से मुक्त था। अतः कहा जा सकता है कि बौद्ध शिक्षा चिन्तनशील नागरिकों के वैचारिक आन्दोलनों तथा समाज में व्यापक स्तर पर हो रहे तार्किक मानव चिन्तन की प्रक्रिया ने बौद्ध शिक्षा के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार कर दिया था। अतः कहा जा सकता है कि बौद्ध शिक्षा भारतीय जीवन के आंगिक विकास का एक सुपरिणाम था न कि भारतीयों के सामाजिक जीवन मे हुई कोई बाह्य वृद्धि का परिणाम कहा जा सकता है। बौद्ध शिक्षा ने मानव जीवन में निर्वाण प्राप्ति पर अधिक जोर दिया। निर्वाण से अभिप्राय उस स्थिति से था जिससे व्यक्ति की सभी लालसाएँ समाप्त हो जाती है। गौतम बुद्ध के अनुसार निर्वाण की प्राप्त वर्तमान जीवन में भी सम्भव हो सकती है। अतः बुद्ध काल की शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य जीवन में निर्वाण प्राप्त करने का उपाय जानना एवं निर्वाण की प्राप्ति को सम्भव बनाना था।

दूसरे शब्दों में छात्रों को ऐसा ज्ञान बोध व आचरण सिखाना था जिससे मस्तिष्क को स्थिरता–व शान्ति प्राप्त हो सके। बौद्ध कालीन शिक्षा में निजी आचरणों पर जोर दिया जाता था जबकि हिन्दू धर्म में

संस्कारों तथा ज्ञान पर अधिक जोर दिया जाता था।

बौद्ध कालीन शिक्षा की विशेषताएँ :– नैतिक चरित्र का निर्माण करना, बौद्ध धर्म का प्रसार करना, व्यक्तित्व का विकास करना, जीवन के लिए तैयार करना साथ ही कुछ विद्यारम्भ के लिए प्रव्रज्या संस्कार – "बालक बुद्ध शरमण गच्छामि धम्मं शरणम् गच्छामि, संघं शरणम् गच्छामि"[7] का उच्चारण भी करता था। प्रव्रज्या प्रातः 8 वर्ष के बालक को दी जाती थी। प्रव्रज्या के बाद बालक सामनेर कहलाता था। जाति का कोई बंधन नहीं था। परन्तु अस्वस्थ्य विकलांग, दण्डित व्यक्तियों, राज्य के कर्मचारियों व सैनिकों को प्रव्रज्या प्राप्त करने का अधिकार न था।

बौद्ध काल में छात्रों की दिनचर्या अपेक्षाकृत अत्यधिक कठिन व शुष्क थी। वे भिक्षाटन करते थे तथा बड़े अनुशासन में रहते हुए विद्याध्ययन करते थे। सामनेर को दस आदेशों का पालन करना आवश्यक था। इन आदेशों को दस सिक्खा पदानि अर्थात् दस शिक्षा पद कहते थे। ये दस आदेश थे : "अहिंसा का पालन करना, शुद्ध आचरण करना, सत्य बोलना, सत् आहार करना, मादक पदार्थों से दूर रहना, निन्दा न करना, सरल जीवन व्यतीत करना, नृत्यादि न देखना, अपरिग्रह, कीमती वस्तुओं का दान न लेना।"[8]

शिक्षा संस्थाएँ बौद्ध कालीन संस्थागत हो गई थी व्यक्तिगत नही रह गयी थी। उस समय संस्थाएँ – तक्षशिला, नालन्दा, बल्लभी, विक्रमशीला, ओदन्तपुरी नदिया, मिथिला तथा जगद्दला आदि शिक्षा संस्थाएँ है।[9]

पाठ्यक्रम :– साहित्य दर्शन कला व्यापार, कृषि, सैनिक आदि अनेक क्षेत्रों में भारत अपने सर्वोच्च शिखर पर आसीन था। शिक्षा व्यवस्था दो भागों में विभक्त था प्रारम्भिक तथा उच्च शिक्षा कुछ कमियाँ भी थी जैसे -- कट्टर धार्मिक विचारों का समावेश, लौकिक जीवन की उपेक्षा, स्त्री शिक्षा की उपेक्षा, हस्तकार्यों के प्रति घृणा, विहारो का भ्रष्ट वातावरण सैनिक प्रशिक्षण की उपेक्षा आदि थी।

निष्कर्ष :– प्राचीन भारतीय शिक्षा के विकास में वैदिक कालीन शिक्षा जहाँ परम्परागत ज्ञान की शुरूआत की हुई वही जैन शिक्षा वैदिक कालीन शिक्षा का ही परिणाम रही जो एक नये तरीके से प्रसारित किया और साथ में बौद्ध कालीन शिक्षा भी एक विकास की अवस्था थी। शिक्षा समाज का दर्पण है और इस नाते समाज की आकांक्षाओं को प्रतिबिम्बित करना शिक्षा का कर्त्तव्य ही नहीं अनिवार्यता भी हो जाती है। जो समाज में होने वाले वाले बदलाव और परिवर्तन की साक्षी होती हैं हमारे देश में शिक्षा के लिए प्राचीन काल से व्यवस्था रही है। शिक्षा हर काल में मानव जीवन के सर्वोत्तम उत्कृष्ट विकास के साथ पूर्ण मानव बनाने पर जोर देती रही है। चाहे वह वैदिक काल हो, जैन काल हो या बौद्ध काल में शिक्षा एक उच्चतम शिखर पर रहीं।

संदर्भ :–

1. मुखर्जी, डॉ. रवीन्द्रनाथ (2014) : भारतीय समाज और संस्कृति विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली चौदहवा संस्करण–1 पृ. 16
2. गुप्ता, प्रो. एस.पी. (2016) : शिक्षा के समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 14
3. गुप्ता, प्रो. एस.पी. एवं डॉ. अलका (2016) : समकालीन भारत और शिक्षा, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद पृ. 1
4. रूहेला, डॉ. सत्यपाल (2012), भारतीय शिक्षा का समाजशास्त्र, राजस्थान हिन्दी गन्थ अकादमी जयपुर, पृ. 10
5. सिंह, मधुरिमा एवं भार्गव, महेश (2012), शैक्षिक दर्शन एवं विचारक, विभोर ज्ञान माला, आगरा, 156, 173
6. http://hi.encyclopediaofjainism.com (जैन शिक्षा पद्धति की वर्तमान प्रासंगिकता) पृष्ठ सं. 1
7. शुक्ला, मधु सिंह (2004), भारत में शिक्षा विस्तार योजना, नई दिल्ली
8. शर्मा, गणपतिराय एवं व्यास, हरिश्चन्द्र (जन्वरी 2013), उदीयमान भारतीय समाज और शिक्षा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 371, 378–379
9. लाल, रमन बिहारी, (2013–14) शिक्षा के दार्शनिक और समाजशास्त्रीय आधार, रामेश रस्तोगी (मेरठ), पृ. 146–148
10. गुप्ता, एस.पी. एवं अलका (2012), भारतीय शिक्षा का ताना बाना, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ. 13–16
11. एन.सी.ई.आर.टी. (जनवरी 2018) भारतीय आधुनिक शिक्षा।

मध्यप्रदेश के जबलपुर जिले के पर्यटन विकास की सम्भावनायें (विशेष भेड़ाघाट के संदर्भ में)

मदन सिंह मरावी
शोधार्थी, अर्थशास्त्र का स्नातकोत्तर अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर, (म.प्र.)
डॉ. संजय कान्त खरे
निर्देशक, सहा. प्राध्यापक अर्थशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महिला महा. जबलपुर (म.प्र.)

सारांश :– भारत जैसे विकासशील देश में पर्यटन विकास की अनेक संभावनाएं मौजूद है। पर्यटन क्षेत्र में किये जा रहे विकास एवं अधोसंरचनागत विकास की सुविधाओं में निरंतर सुधार से पर्यटन के क्षेत्र में अग्रिम देश के रूप में उभरकर सामने आया है। पर्यटन अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका रखता है, कि विभिन्न हिस्सों में आज भी पर्यटन सम्बधी बुनियादी ढांचे देश में स्थानीय लोगों की जीवन का गुणवत्ता में सुधार हुआ है साथ – साथ उनके जीवन काल मे मदद की है। जैसे– स्थानीय कला, शिल्प पर्यटन, पर्यावरण और आर्थिक सामाजिक तथा सांस्कृतिक के संरक्षण के बारे में जागरूक किया है। पर्यटन आधुनिक दुनिया में सबसे तेज से बढ़ने वाला सेवा उद्योग है। मध्यप्रदेश में पर्यटन की सम्भावनाओं को बढ़ाने के लिए सरकार ने ट्रेवल मार्ट का शुभारंभ किया है इसमें कई देशों के पर्यटन ऑपरेटर्स, ट्रेवल एजेन्ट, होटल एसोसिशन के प्रतिनिधि शामिल होते हैं। मध्यप्रदेश के सभी पर्यटन स्थलों के विकास की ओर केन्द्रित किया जा रहा है। प्रदेश में ऐतिहासिक, प्राकृतिक और सांस्कृतिक स्थलों के विकास के लिए लगातार प्रयास जारी है। जो कुछ सालों बाद मध्यप्रदेश की पर्यटकों की संख्या में वृद्धि की जा सकती है। पर्यटन विभाग द्वारा अब तक किये गये कार्य एवं प्रस्तावित कार्य – योजना के कार्यस्वरूप में परिणित होने पर देश प्रदेश का पर्यटन क्षेत्र में और विकास की ऊँचाईयों को हासिल करेगा। तथा प्रदेश में पर्यटन की अपार संभावनाएँ को सृजित करेगा।

प्रमुख शब्दावली :– पर्यटन विकास, आर्थिक स्थिति, पर्यटन अर्थव्यवस्था चहुँमुखी विकास, पुरातात्विक साक्ष्य, रोजगार की सम्भावनाएँ, अधोसंरचनागत विकास, प्रगतिशील, बहुआयामी विकास, आदि।

प्रस्तावना :– भेड़ाघाट जबलपुर जिले में स्थित है जो पर्यटन की दृष्टि से उसका परिवेश अपने विशिष्ट नैसर्गिक सौंदर्य से परिपूर्ण प्रदेश का महत्वपूर्ण पर्यटक स्थल है। अप्रतिम संगमरमर चट्टानों के मध्य नर्मदा नदी यहां पर सकरे दर्रे से बहती है। संगमरमर की ऊँची चट्टानों के मध्य से नर्मदा नदी का हरा – नीला गहरा जल प्रवाह का दृश्य अत्यंत मनोहरी एवं हृदयस्पर्शी हैं।

जबलपुर को मध्यप्रदेश की सांस्कृतिक राजधानी व संस्कारधानी माना जाता है यहाँ कई ऐतिहासिक पुरातात्विक और प्राकृतिक स्थान देखे जा सकते है। यहां एक प्रमुख प्रशासनिक और शैक्षिक केन्द्र भी है। विशाल छावनी क्षेत्र में बड़ी संख्या में स्कूल और कॉलेज दिखाई देते है। यह शहर महाभारत युग जितना प्राचीन है। 12वीं सदी में दौरान जबलपुर प्लेजर रिसार्ट और गौंड राजाओं की राजधानी हुआ करता था। उसके बाद यहाँ कलचुरी राजवंश का शासन था। जबलपुर की मनोहरी प्राकृतिक सुन्दरता की वजह से 12वीं शताब्दी में गोंड राजाओं की राजधानी रहा, उसके बाद कलाचूड़ी राज्य के हाथ रहा और अन्ततः इसे मराठाओं ने जीत लिया और तब तक उनके पास रहा जब तक की ब्रिटिश ने 1817 में उनसे ले न लिया। जबलपुर में ब्रिटिश काल के चिन्ह आज भी मौजूद है। जैसे – कैन्टोनमेण्ट, उनके बंगले और अन्य ब्रिटिश कालीन इमारतें। जबलपुर विश्वप्रसिद्ध मार्बलरॉक्स के लिए प्रसिद्ध हैं, जो कि यहाँ से 23 कि.मी. दूर भेड़ाघाट में स्थित है। माँ नर्मदा के दोनों तटों के दूर तक की ओर 100–100 फीट ऊँची ये संगमरमरी चट्टानें बहुत ही सुन्दरमय दृश्य प्रस्तुत करती हैं।

इस दृश्य के लिये कैप्टन जे. फोरसिथ ने अपनी किताब हाई लैण्डस ऑफ सेण्ट्रल इंडिया में लिखा है कि ऐसा सुन्दर दृश्य देख आँखों थकती नहीं जब तक इन शफ्फाक चट्टानों से सूर्य की किरणें छन छन कर टकरा कर पानी पर पड़ती है। इन सफेद चट्टानों की ऊँची नुकीली पंक्तियाँ नीले आकाश और गहरे नीले पानी के बीच अपनी रूपहली आभा लिए दूर तक दिखाई देती हैं। कहीं धूप, कहीं छांव का यह मोहक खेल और दूर तक फैली शान्ति आपको अलग ही दुनिया में ले जाती है। इन चट्टानों में बहती नर्मदा नदी की पाट इन चट्टानों के अनुरूप घटता बढ़ता रहता हैं। कहीं सकरी तो कहीं चौड़ी। यहाँ नौका विहार की सुविधा नवम्बर माह से मई तक होती हैं। यहाँ